सुवेला

Shambo Nath Shastri

सुवेला

शम्भुनाथ 'शेष'

रा ज क म ल प्र का श न दि ल्ली

संकेत

एक शरद्-पूर्णिमा की
सुवेला को

स्वागत, नये सूर्य का स्वागत !

स्वागत, नये सूर्य का स्वागत !
स्वागत नये गगन का !

घनीभूत नैराश्य-तिमिर उड़ गया,
सदाशा लहकी !
राष्ट्र-कल्पतरु पर विहगी-सी
नव-अभिलाषा चहकी !
नयी उषा क्या खिली,
खिल गया स्वर्ण-कमल जीवन का !
स्वागत नये गगन का !

चिर-आलस्य-प्रमाद-मुँदे
खुल गये नयन निंदियारे !
कर्म-क्षेत्र में आत्म-चेतना चमकी,
विभु छाया रे !
स्वर्ण-रश्मियाँ लगीं लुटाने
वैभव नन्दन-वन का !
स्वागत नये गगन का !

स्वप्न हुआ साकार, क्षितिज पर
सहज सत्य मुसकाया !
आसावरी अलाप ले उठी,
नया राग लहराया !

कलित-कल्पना को फिर से
आधार मिला यौवन का !
स्वागत नये गगन का !

लोक भावना के विकास की
मंगल वेला आई !
मानव का विश्वास उभर कर
बना उषा-अरुणाई !
बालारुण की किरणें लाईं
अभ्युदय जन-जन का !
स्वागत नये गगन का !
स्वागत, नये सूर्य का स्वागत !
स्वागत, नये गगन का !

एक युग पश्चात् प्रेयसि !

आज तुम सहसा मिलीं प्रिय,
निपट चिन्तापूर्ण क्षण में !
विगत दिवसों की मधुर सुधि,
अश्रु बन उमगी नयन में !
जल उठी सूने हृदय में
स्नेह की लघु वर्तिका सी,
ज्यों किसी दिग्भ्रान्त को
दिख जाय ध्रुव-तारा गगन में !
बन गई पूनो-समुज्ज्वल
यह अमा सी रात !
प्रेयसि, एक युग पश्चात् !

हो चुका है दूर अब तो
विरह का व्यवधान !
योग आया है मिलन का
आर्द्र तन-मन-प्राण !
सजल छवि छाये नयन की
बढ़ चली है प्यास,
मिलन-आतुर प्राण करते
स्वतः गुन-गुन-गान !
फिर सकुचने लगा है
अवसाद का जलजात !
प्रेयसि, एक युग पश्चात् !

हम बहुत आगे निकल आये
प्रिये, जीवन डगर पर !
रह गईं पीछे प्रमुग्धा भावनाएं
स्वप्न सुन्दर !
तव अदर्शन मेघ में शशि सा
रहा बस आवरण बन,
सत्य औ' कटु सत्य जीवन के
रहे हमसे प्रबलतर !
भोर का सपना हुई, प्रिय,
वह प्रणय की बात !
प्रेयसि, एक युग पश्चात् !

आज यह क्षण का मिलन
बन जायगा सम्बल हृदय का !
चिर-विरह की शून्यता में
भाव भर देगा प्रणय का !
प्राण-मन्दिर जगमगा देगी
अमर-विश्वास रेखा,
तुम उषा सी कल्पना में
रंग भरना नव उदय का !
साधना की रात्रि देखे
परम पुण्य प्रभात !
प्रेयसि, एक युग पश्चात् !

तभी खुलेंगे द्वार !

अभी रुद्ध हैं द्वार !

अभी नहीं वह ज्योति नयन में
जो पहचाने रूप,
हृदय-भूमि को अभी चाहिए
नव जागृति की धूप !
जिसके स्पर्शमात्र से सरसें
मानवता के प्राण,
जिनका सरस-परस कर प्रतिमा
बने, मूक पाषाण !
स्वप्न का हो शृंगार !
किन्तु अभी तमसावृत है नभ
अभी रुद्ध हैं द्वार !

अभी रुद्ध हैं द्वार !

अभी नयन में केलि कर रहे
यौवन मद के सपने !
मन की दुर्बलता, आशंका
आतुर भय से अपने,
अविश्वास की कंथा ओढ़े
मानव अब तक सोता
वह क्या जाने स्वर्ण-उषा का
दर्शन कैसा होता !

प्रकृति में हाहाकार
उसके लिए रात है काली
अभी रुद्ध हैं द्वार !

तभी खुलेंगे द्वार !

तेर-मेर की रात दूर हो
पुलके स्वर्ण सवेरा !
मानस लहरे, हृदय कमल पर
भाव-मधुप का डेरा,
सोम-रश्मियों-धुली कली से
सद् विचार मुसकायें,
पर का भाव परे हो मन से
सुमन सुरभि फैलायें,
रोमांचित संसार !
सुषमा से भर जाये अन्तर
तभी खुलेंगे द्वार !

तभी खुलेंगे द्वार !

नयन नयन के हुए पाहुने
मन ने मन को जाना !
प्राण प्राण ने अंचल धर कर
ज्यों ही पथ पहचाना !
मैं तू का आवरण हटे, तो
एकरूपता दरसे !
मानव अपने खोये धन को पाये,
जीवन सरसे !
सरल स्नेह व्यापार !
मानव मानव एक स्तर पर
तभी खुलेंगे द्वार !

ये क्षण सर्वोदय के !

सरक चला आवरण तिमिर का
ज्योति लगी मुसकाने !
भोर-विहग हो उठे मुखर
दृग खोले नव कलिका ने !
कण-कण में नव-चेतन चमका,
दमक उठी स्वर्णाभा;
लगी सनेह भरे मानस की
लहर-लहर लहराने !
झोंके मदिर मलय के !
ये क्षण सर्वोदय के !

अमर-रश्मियों धुले, खुले
हरिताभ नयन निंदियारे !
पुष्प-गंध से बिखर चले
सपनों के अवयव सारे !
सत्य निनादित हुआ, वेद ध्वनि
अम्बर तक लहराई,
आसावरी अलाप ले उठी
स र म प ध स म प गा रे !
जागे स्वर जय-जय के !
ये क्षण सर्वोदय के !

ब्रह्म-मुहूर्त, साधना जागी,
जागा प्राणी-प्राणी !

किरण-किरण धरती से कहती
नभ की अमर कहानी !
टूटा मौन, चतुर्दिक् नव
जागृति का कलरव छाया,
मानस के अरुणाभ कमल पर
समुद गा उठी वाणी !
रंग खिले अभिनय के !
ये क्षण सर्वोदय के !

पर तुम किस चिन्ता में डूबे
जागो, पलक उघारो !
तुम्हें प्रकृति आमन्त्रण देती
अपना रूप निहारो !
तुम हो अमृत-सुवन, तुम मानव,
तुम नवयुग निर्माता,
पराबुद्धि के रंग महल में
भौतिक ज्ञान उतारो !
खोलो द्वार हृदय के !
ये क्षण सर्वोदय के !

तुम जगो ज्योति बन कर उदार

तुम जगो ज्योति बन कर उदार
मम मानस की गहराई में !
कविता-विहगी हो उठे मुखर
जैसे कोयल अमराई में !

यह अर्ध रात्रि, शशिहीन गगन !
अज्ञात मार्ग, एकाकी मन,
यह जड़ीभूत दिक्-नीरवता,
घनघोर तिमिर, यह सूनापन !
आँखों आगे तम का सागर
है बियावान सा रहा फैल,
तारे भी हैं छिप गये कहीं
कुछ सूझ नहीं पड़ रही गैल !
मुसका दो, छट जाएं बादल
फिर नील छटाएँ उठें छहर,
नयनों को आशालोक मिले
ध्रुव तारे की परछाई में !
तुम जगो ज्योति बन कर उदार
मम मानस की गहराई में !
कविता-विहगी हो उठे मुखर
जैसे कोयल अमराई में !

तुम विहरो मेरे नयनों में
तो प्राणों को मधुमास मिले !
तुम विचरो मेरे मानस में
तो जीवन को विश्वास मिले !
तुम गूंजो मेरी वीणा में
तो गीतों को स्वर-तान मिले !
तुम कहीं मार्ग में मिल जाओ
तो मंज़िल की पहचान मिले !
तुम गा दो, मम कल्पना कमल
विकसित हो, मानस लहर लहर,
तव सहज सलज छवि बसे नयन
ऊषा की नव अरुणाई में !
तुम जगो ज्योति बन कर उदार
मम मानस की गहराई में !
कविता-विहगी हो उठे मुखर
जैसे कोयल अमराई में !

अणु बम से शृंगार पा चुका

अणु बम से शृंगार पा चुका
सपना विश्व विजय का !

कहीं स्वतन्त्र विचारों को भी
बाँध सकीं प्राचीरें !
कहीं उभरती हुई दबी हैं
ज्योति-प्रभूत लकीरें !
देश जाति की सीमाओं में
'ज्ञान' रहा कब बंदी !
किसके लिये अगोचर है प्रिय
वैभव नील-निलय का !
अणु बम से शृंगार पा चुका
सपना विश्व विजय का !

ज्ञान-ज्योति सर्वत्र पहुँचती
काल-चक्र की गति से !
पाता नहीं विराम छंद यह
'मेर-तेर' की यति से !
'आज' और 'कल' के अन्तर में
भला निमिष हैं कितने ?
किस पर द्वार रुद्ध है, प्रेयसि,
ज्ञान-राशि-संचय का !

अणु बम से शृंगार पा चुका
सपना विश्व विजय का !

अणु-अणु मिल कर जगत् बना है,
कितनी सुन्दर कृति है !
अणु का विश्लेषण विनाश है
यहीं बुद्धि की इति है !
'अथ' के लिये प्रयास करो कुछ
'इति' की ओर न जाओ,
मार्ग प्रशस्त करें आओ मिल
मानव-अभ्युदय का !
अणु बम से शृंगार पा चुका
सपना विश्व विजय का !

कवि नयनों में रहो ज्योति बन

कवि नयनों में रहो ज्योति बन
हिय में वसो प्राण आभा-सी !
प्रतिभा के प्रांगण में सरसो
अमर कुंज में कल्पलता-सी !
मानस के वृन्दावन में विचरो,
अनुरागमयी राधा-सी !
मोहन के पावन-प्रसंग में
संग रहो, प्रिय सखि, ललिता-सी !
मार्ग साधना का दुर्गम है,
फैला चहुँ दिशि तम ही तम है,
योग-यामिनी में मुसकाओ,
पूर्ण-सिद्धि-राकेश-कला-सी !
मन-मृग भटक रहा है कब से,
माया के जलहीन प्रान्त में,
जीवन मरुथल के राही को,
करती चलो जलद-छाया-सी !
इस भावना-सजल-सरिता में,
थोड़ी क्रीड़ा तो कर देखो,
हृदय उमड़ आया नयनों में,
लहराती है क्या यमुना-सी !
सूनी-सूनी सी लगती है,
यह गहमा-गहमी की दुनिया;
अलख चरण की नूपुर-ध्वनि से,

हर लो ना यह नीरवता-सी !
आज घिरी है श्यामल घन सी,
उर अम्बर में निपट निराशा,
आशा बन कर छिटक पड़ो तुम,
भाव-क्षितिज पर मधु-राका-सी !
क्रूर अभावों के शूलों में;
हैं बिंध रहे सुमन कितने ही,
भर दो वह मधु ज्योति दृगों में,
सृष्टि सरस जाये कविता-सी !
विश्व सो रहा है पर हिय में,
दर्शन की है ललक जागती,
रूप-सुधा कब पान करेंगी,
तुम्हीं कहो ये आँखें प्यासी !!
कवि नयनों में रहो ज्योति बन
हिय में बसो प्राण आभा-सी !

सतलुज की भीगी रेती में

सतलुज की भीगी रेती में,
उगता जीवन देख रहा हूँ !
सघन तमिस्रा के अंचल में,
ऊषा आनन देख रहा हूँ !
कहीं स्वतन्त्र विचारों को भी
बन्दी कर पायीं प्राचीरें ?
गिरिवर की गह्वर-कारा में,
निर्झर-नर्तन देख रहा हूँ !
वंशी की ध्वनियाँ आती हैं,
स्वरपायी कानों में मेरे,
सूनी-सी आँखों से पुनरपि,
मानस-दर्पण देख रहा हूँ !
लहरों की व्याकुलता क्या है,
अभिलाषी-अन्तर का गायन,
मैं उनके उत्थान-पतन में,
जीवन-दर्शन देख रहा हूँ !
किसका अभिनन्दन करने को,
छिटके हैं अम्बर में तारे,
नन्दन वन का चल जल तल पर
अद्भुत-चित्रण देख रहा हूँ !
मानव का स्वागत करने को,
कितने उत्सुक हैं नभवासी,
दूर क्षितिज पर किन्नरियों का,

आत्मनिवेदन देख रहा हूँ !
अपनी धुन में गाये जा कवि,
गीत-प्रदीप जलाये जा कवि,
तेरी वाणी में इस युग का,
पट-परिवर्तन देख रहा हूँ !

जब नयन बने हों सुषमालय

जब नयन बने हों सुषमालय,
घर बार की चिन्ता कौन करे ?
जब अपनी भी कुछ होश न हो,
संसार की चिन्ता कौन करे ?

ज्योत्स्ना है उसका सौम्य हास,
यमुना प्रिय-वाणी का विलास,
मधुवन की जाए कौन डगर,
अभिसार की चिन्ता कौन करे ?

मन में है साध समर्पण की,
प्राणों में प्यास निवेदन की,
सारा ही जग भासता स्वप्न,
शृंगार की चिन्ता कौन करे ?

तारे हैं आँखों में गड़ते,
धरती पर पाँव नहीं पड़ते,
जब नभ-विहार करने निकले,
आधार की चिन्ता कौन करे ?

अपनेपन को खोकर हमने,
सारे जग का वैभव पाया,
इस आत्म-समर्पण के स्तर पर,
अधिकार की चिन्ता कौन करे ?

लहरों के लास्य-भंवर में हम,
जीवन-तरनी को खे लाए,
अब पार की चिन्ता कौन करे,
पतवार की चिन्ता कौन करे ?

यह अस्त-व्यस्त वेष-भूषा,
अटपटी अपरिचित-सी वाणी,
इस युग में 'शेष' भला ऐसे,
स्वरकार की चिन्ता कौन करे ?

तेरे स्वप्न भवन से रूपसि

तेरे स्वप्न भवन से रूपसि,
जाग्रत-प्यार लिये जाता हूँ !
इक संसार लिये आया था,
इक संसार लिये जाता हूँ !

जिनके कंपन में जीवन था,
शाश्वत भावों की लहरें थीं,
आज वही अन्तर-वीणा के
टूटे तार लिये जाता हूँ !

पतझड़ के बिखरे पातों ने,
अमराई की गाथा कह दी,
मुरझाई कलियों का दृग में,
नैश-निखार लिये जाता हूँ !

आँखों के पहचाने पथ से,
हृदय-व्यथा उमड़ी पड़ती है,
सजल-कमल-दल में प्रिय जैसे,
पारावार लिये जाता हूँ !

सूने-सूने दीर्घ क्षणों में,
मेरी लघुता ने पर तोले,
साथी-हीन विहग-सा नभ में,
शून्य विचार लिये जाता हूँ !

कली चटकने पर भी ललिते,
पग-ध्वनि का धोखा होता है,
सजल उनींदे नयनों में भी,
स्वप्न-प्रसार लिये जाता हूँ !

फिर तेरी सुधि आई, जैसे
स्नेह मिले बुझते दीवे को,
गीतों की छवि स्निग्ध प्रभा में,
अन्तर-तार लिये जाता हूँ !

रूप दृगों से दूर भले हो

रूप दृगों से दूर भले हो,
किन्तु हृदय से दूर नहीं है !
रजनी के तारों की आभा,
नील-निलय से दूर नहीं है !

किस मधु छवि ने ली अँगड़ाई,
बोल उठा है कोकिल मन का,
फिर भी जीवन-सरगम ललिते,
मादक-लय से दूर नहीं है !

जीवन-पथ के श्रान्त-बटोही,
यह नैराश्य-मलिनता कैसी,
तेरी मंज़िल कठिन सही, पर
सुषमालय से दूर नहीं है !

मधुर-प्रणय के सोम-क्षणों को,
विरह-तमिस्रा में ही ढूंढो,
अन्धकार की अन्तिम रेखा,
अरुणोदय से दूर नहीं है !

मानस के दर्पण में हमने,
देखी रूप-जगत् की झांकी,
वह अमूर्त भी अपने घर में,
रस-अभिनय से दूर नहीं है !

सावधान हो ज्ञान मनुज के,
परिवर्तन नद उमड़ उठा है,
जीवन की कोई भी रचना,
विश्व-प्रलय से दूर नहीं है !

अमर पेंग में कभी झुलाए,
कभी अवनि के गीत गवाए,
कोई भी मायावी उपक्रम,
उस निर्दय से दूर नहीं है !

यौवन का पथ अति बीहड़ है

यौवन का पथ अति बीहड़ है,
तू सावधान हो चल साथी !

यह पथ है काँटों भरा
किन्तु दृग को लगता पुष्पासन सा !
इस पथ में पानी सुलभ नहीं
मन प्यासा रहता मरु वन-सा !
तरु की विरली छाया भी तो
प्रियतम का धोखा दे जाती
इस पथ में तपता जेठ लगे
नयनों को रसमय सावन सा !
अनुराग-सरोवर बन जाता
रे, पल भर में मृगजल साथी !
यौवन का पथ अति बीहड़ है,
तू सावधान हो चल साथी !

इस पथ में, तुझे खबर भी है ?
पग-पग पर बाधा आती है !
पद-चिह्नों की रज मंज़िल की
दूरी को रज बन जाती है !
प्रातः का चला हुआ पन्थी
विश्राम न पाता क्षण भर को,
निशि में तारों की लौ

मन में चलने की लौ चमकाती है !
यह लक्ष्यहीन चलना क्या है
नयनों, प्राणों का छल, साथी !
यौवन का पथ अति बीहड़ है,
तू सावधान हो चल साथी !

हां, यौवन तो अपने पथ का
खुद ही निर्माण किया करता !
पथ की विपदा बाधा का वह
कब मन में ध्यान किया करता !
उसके प्रकाश की ऊष्मा तो
जड़ में चेतनता भर देती
उसका विश्वास नये युग को
नव जीवन दान किया करता !
पर तू है क्यों उल्लास हीन
खुद को पहचान, संभल, साथी !
यौवन का पथ अति बीहड़ है,
तू सावधान हो चल साथी !

पर, तेरे पग डगमग हैं क्यों
तू अपना मार्ग बनाता चल !
अनदेखी मंज़िल से अपनी
पहली पहचान बढ़ाता चल !
तेरी गति शाश्वत जीवन में
नव गति की प्रेरक बन जाये
पद चिह्नों पर नन्दन वन के
शत-शत मन्दार खिलाता चल !
प्राणों की ज्योति अडोल जगा,
ले प्रिय सुधि का सम्बल, साथी !
यौवन का पथ अति बीहड़ है,
तू सावधान हो चल साथी !

आज प्रिय तुम फिर मिलीं अनुराग-पथ पर

शान्त : ज्यों तूफान के पश्चात् पारावार,
सौम्य : ज्यों शरदेन्दु का निखरा विमल आकार,
मौन : जैसे टूट कर रह जाय वीणा तार,
दिव्य : जैसे रागिनी औ' रश्मि का अभिसार,
पूर्णकामा : ज्यों सरित् पा जाय सिन्धु गंभीर अन्तर !
आज प्रिय तुम फिर मिलीं अनुराग-पथ पर !

मैं विकल : जैसे कमल-दल पर निशीथ-तुषार,
मैं अशान्त : विभावरी में ज्यों जलधि व्यापार,
मैं सकाम : प्रभात में ज्यों स्वप्न का शृंगार,
मैं उदास निराश : ज्यों सन्ध्या समय कान्तार,
मैं तृषित अतृप्त : ज्यों मरुभूमि का मृग भ्रान्त कातर !
आज प्रिय तुम फिर मिलीं अनुराग-पथ पर !

फिर वही क्षण—दिव्यतम क्षण—हो उठे साकार,
प्राण, जब ये दो नयन सहसा हुए थे चार,
भावनाएँ सजग, इच्छा थी मुखर सुकुमार,
मिले विस्मय विन्दु पर जब दृष्टियों के तार,
प्यार की पहचान सा कुछ मिल गया जैसे मधुरतर !
आज प्रिय तुम फिर मिलीं अनुराग-पथ पर !

किन्तु यह दर्शन बने क्यों मिलन का त्यौहार,
प्रेरणा सी यह प्रतीक्षा, यह उमगता प्यार,
क्रियाशील प्रबुद्ध जीवन क्यों बने सविकार,
चिर विरह ही चिर मिलन की भाव-भूमि उदार,
मेघ तब तक मेघ, भूशायी न हो जब तक बरस कर !
आज प्रिय तुम फिर मिलीं अनुराग-पथ पर !

प्रेम पुलकित नव उषा

प्रेम पुलकित नव उषा,
नव क्षितिज मुसकाये !

लुप्त हो दुविधा-तिमिर
विश्वास की पावन प्रभा में !
एक अभिनव चेतना चमके
विचारों की विभा में !
पा अमर सन्देश मानव
खिल उठे सहसा कमल सा ;
फूट निकलें अमृत-सोते
इस तृषित सी मरु-धरा में !
स्वप्न का शृंगार हो फिर
सत्य छवि पाये !
प्रेम पुलकित नव उषा,
नव क्षितिज मुसकाये !

फिर नया उत्साह उमगे
कोटि जन-जन के हृदय में !
प्रेम का संगीत उभरे,
इस प्रभाती स्वस्थ लय में !
स्नेह की नव रश्मियाँ
रंग दें बसन्ती रंग चोला ;
एक सात्विकता महाछवि

पाय, मानव के उदय में !
यह मधुर आश्चर्य,
जाग्रति ज्योति बन जाये !
प्रेम पुलकित नव उषा,
नव क्षितिज मुसकाये !

स्वर विविध हों, रागिनी,
पर, एक दे सबको सुनाई !
विविध रंगों में वही प्रिय
चित्र देता हो दिखाई !
जल रहे हों दीप अगणित
ज्योति पर हो एक सब की ;
विविध रूपों में उसी इक
नाम की महिमा समाई !
कवि, तुम्हारी साध को
युग भारती गाये !
प्रेम पुलकित नव उषा,
नव क्षितिज मुसकाये !

धरती का कण-कण हो मधुमय

धरती का कण-कण हो मधुमय,
अणु अणु से अमृत रस बरसे !
जीवन सरसे !

लतिकालिंगित तरु-तरु झूमे,
छक कर जीवन-मद से !
पर्वत उर से फूटे निर्झर,
मिले नदी आ नद से !
विहँगों का शाश्वत कलरव हो,
स्वर-स्वर में सुख का अनुभव हो,
हर-हर का दे नाद नाई,
मानस लहर-लहर से !
जीवन सरसे !

नवल प्रभात लजीली ऊषा
स्वर्ण लुटाती आए !
जागृति का नव-वैभव पाकर,
सब अभाव भर जाए !
मानव-मानव के अधरों पर,
हों अनुराग भरे पावन स्वर,
प्राणी-प्राणी राग-द्वेष तज,
अन्तरतम को परसे !
जीवन सरसे !

पृथ्वी के कोने-कोने में,
प्रेम-प्रभा हो फैली !
अमृत किरणों से धुल जाए,
मानवता अधमैली !
मृत्यु—श्रान्त का सुख-सपना हो,
जीवन—सारा जग अपना हो,
रहे न अन्तर प्राण-प्राण में,
हो समभाव अपर से !
जीवन सरसे !

अमृत के दो घूंट पिये

अमृत के दो घूँट पिये, तो
अब विष का प्याला भी पी ले !
ओ जीवन पर मरने वाले
जीवन की ज्वाला भी पी ले !

युग-युग से पीता आया तू
अंगूरों का निथरा पानी,
अपनी इन आँखों से ढलती
अब रक्तिम हाला भी पी ले !

तेरी निपट निराशा ही
पहचान करा देगी आशा से,
तू मानस का अन्धकार वन,
जग का उजियाला भी पी ले !

पावस के हिय को सरसाती
बरस रहीं हों आंखें तेरी,
जिसे अलौकिक मदिरा कह कर
मानिनि मधुबाला भी पी ले !

गूँज उठे मन के प्रांगण में
तेरे प्राणों का मृदु गायन,
सुख-दुख की चलती सांसों में,
जीवन की ज्वाला भी पी ले !

रूप प्रकृति का अन्तर्दर्शन,
तेरे अधरों की रेखा हो,
ललित-भावना के नयनों की,
सोमोज्ज्वल ज्वाला भी पी ले !

दया-द्रवित होकर अगस्त्य ने
सोख लिया था सागर खारा,
क्या अचरज यदि बिफरा मानव,
रोषारुण हाला भी पी ले !

आज है रंगीन पावस सान्ध्य-वेला

आज है रंगीन पावस, सान्ध्य-वेला !
आज है उल्लासमय यह मन अकेला !

आज कण-कण है सुभग सुन्दर सुवासित,
आज है सारा जगत् सुषमाभिरंजित;
आज नयनों में सदाशा मुसकराती,
आज पुलकित प्राण, वाणी गीत गाती;
तुम नयन सम्मुख सरस छवि मूर्ति-सी हो !
एक मधुर अभाव की प्रिय पूर्ति-सी हो !

गुनगुनाने फिर लगी हैं भावनाएँ,
चेतनामय हो चली हैं कामनाएँ;
फिर अलक्षित हो चले व्यवधान, बाले,
मधु-मिलन ही चाहते हैं प्राण, बाले;
तव नयन पायें सलज मुसकान यों ही !
और कवि गाये मिलन के गान यों ही !

आज है रंगीन पावस-सान्ध्य वेला !
आज है उल्लासमय यह मन अकेला !

रात की बात

नयन उठे, मिले, झुके, प्यार की रात हो गई !
मौन का मौन रह गया, बात की बात हो गई !

रुक न सकी सुहासिनी रात की रात के लिये,
दीप अभी बुझा न था और प्रभात हो गई !

पृथ्वी का सत्य ले उड़ा मेरे अजान स्वप्न को,
प्रातः चले पथी को यों राह में रात हो गई !

प्रेम दृगों में अश्रु को देख के रूप ने कहा,
आप की बात सुन चुके, आप की बात हो गई !

मौन भी चुप न रह सका देख किसी के मौन को,
और सजग विदा समय रातों की रात हो गई !

मेरा प्रणाम ले बहो, प्रेम विरह के आँसुओ,
जिसको अधर न कह सके, तुमसे वह बात हो गई !

चांद सा मुसकरा उठा ध्यान में कोई आज फिर
और सहज सुहागिनी साधों की रात हो गई !

सावन की फुहारों में

सावन की फुहारों में प्राणों को भिगो देखें !
सौन्दर्य सरोवर में नयनों को डुबो देखें !

मधुपान से मानस की कब शान्त हुई ज्वाला,
यह बरस रहा अमृत, तन-मन को समो देखें !

वह आप लुटाता है अनबिंधे तरल मोती,
हम भी प्रिय स्वागत में, दो हार पिरो देखें !

जीवन के हलाहल की कटुता न रहे बाकी,
यह पिघली हुई ज्वाला, अमृत ही न हो, देखें !

समवेदना फूट पड़े जन-मन में नवांकुर-सी,
अनुराग की धरती में दो अश्रु ही बो देखें !

है मन को ढंके लेता, सन्ताप तिमिर-घन सा,
गाते हुए आत्मा के दो दीप संजो देखें !

है बांचनी क्या मुश्किल कर्मों की अमिट रेखा,
आकाश के तारों के अनुकूल तो हो देखें !

विश्व भर की हलचलें

विश्व भर की हलचलें गहरे तिमिर में खो गयीं !
पड़ गया हरियालियों का रंग कुछ-कुछ सांवला,
भौंर की मधु बांसुरी का स्वर कहीं लय हो गया,
बालपन की नींद में अनजान कलियां सो गयीं !

इस समय सतलुज नदी का तामसी तट मौन है !
झोंपड़ी के पास मांझी सो रहा है बेख़बर,
और नौकाएँ बंधी हैं शान्त जल की धार पर,
पार परले जा सके, तैराक ऐसा कौन है !

हो रही है नील नभ में रूप तारों की सभा !
कल्पनायें दूधिया-पथ पर विचरती हैं जहां,
मोतियों के खेत में ज्यों खेलती हों तितलियाँ,
रात भीगी जा रही है स्वप्न का जादू जगा !

विश्व सारा सो रहा है नींद के प्रासाद में !
किन्तु मन अब भी सजग सा है किसी की याद में !

आज नवयुग की उषा में

आज नवयुग की उषा में, नव जगत् निर्माण कर लें !
प्राण-भीनी गीतियों से, शान्ति का आह्वान कर लें !

रूढ़ि-जर्जर विश्व-जीवन यान चलने से रहा अब,
स्नेह-बाती-हीन जग का दीप जलने से रहा अब,
बुद्ध मानस को निशा का स्वप्न छलने से रहा अब,
क्यों न शाश्वत साधना से दीप्त अपने प्राण कर लें !
आज नवयुग की उषा में, नव जगत् निर्माण कर लें !
प्राण-भीनी गीतियों से, शान्ति का आह्वान कर लें !

क्या धरा है इस पुरानी व्यर्थ जगबीती कथा में,
बुझ चुकी है अग्नि जो वह कब सुलग पाई हवा में,
रात का सपना कभी साकार देखा है दिवा में ?
ज्ञान वीणा का मनोरम आज स्वर-सन्धान कर लें !
आज नवयुग की उषा में, नव जगत् निर्माण कर लें !
प्राण-भीनी गीतियों से, शान्ति का आह्वान कर लें !

स्वार्थ-लिप्सा के अनल में जल रहा है विश्व सारा,
कूट नीति, प्रवंचना, भय का चतुर्दिक् है पसारा,
यह निराशा ग्रस्त जीवन राख हो जाये न सारा,
चांद-से हम भी पराई हृदय-ज्वाला पान कर लें !
आज नवयुग की उषा में, नव जगत् निर्माण कर लें !
प्राण-भीनी गीतियों से, शान्ति का आह्वान कर लें !

हम युगों से चल रहे हैं किन्तु अब तक हैं डगर में,
यों त्रिशंकु समान कब तक प्राण झूलेंगे अधर में,
क्यों नहीं है पांव में गति, ज्योति दृग में, शक्ति स्वर में,
जाग कर साथी चिरन्तन लक्ष्य की पहचान कर लें !
आज नवयुग की उषा में, नव जगत् निर्माण कर लें !
प्राण-भीनी गीतियों से, शान्ति का आह्वान कर लें !

इस जग में भेजा था तूने

इस जग में भेजा था तूने
तो जग का जीवन भी देता !
जैसा मुझको हृदय दिया था,
कुछ वैसे साधन भी देता !

राई-सी है दुनिया तेरी,
पर्वत से हैं सपने मेरे;
मेरी प्रतिभा के हारिल को
सीमाहीन गगन भी देता !

सागर के प्यासे की भी क्या,
ओस-कणों से प्यास बुझी है ?
प्रेम-प्यास मुझको दी थी,
तो प्रेम सहित मधुकण भी देता !

तीनों लोक लीक से लगते,
मेरी आकांक्षा के आगे;
कलित-कामना की क्रीडा को
विस्तृत-सा प्रांगण भी देता !

प्रस्तर की प्रतिमा में कब तक
प्राण-प्रतिष्ठा होगी तेरी ?
कण-कण में जो तुझे देखते,
ऐसे दिव्य-नयन भी देता !

नयनों में आश्चर्य भरा है,
देख किसी की अद्भुत झांकी,
जग होता प्रतिबिम्बित जिसमें,
वह विचार-दर्पण भी देता !

सुनता हूँ तेरा निवास है
मेरे सत् सौन्दर्य लोक में,
अकुलाता यों ज्ञान भला क्यों
प्रिय, जो तू दर्शन भी देता !

जग मग ज्योति जगे

जग मग ज्योति जगे दीपाली
मन का मिटे अँधेरा !

शाश्वत स्नेह दान पा भीजे
नव-जीवन की बाती,
कर्मलोक के अन्तरिक्ष में
समता हो लहराती,
द्वेष-द्वन्द्व का तिमिर दूर हो
उतरे सुख का डेरा !
मन का मिटे अँधेरा !
जग मग ज्योति जगे दीपाली
मन का मिटे अँधेरा !

दीपक राग सजीव हो उठे
श्री आये वर देती !
जन-मन को संतृप्त करे फिर
नये धान की खेती !
दिग् दिगन्त को नवोत्साह ने
बन प्रकाश हो घेरा !
मन का मिटे अँधेरा !
जग मग ज्योति जगे दीपाली
मन का मिटे अँधेरा !

हृदय-अवध में मुदिता छाये
गूंजें स्वर जय-जय के !
सत्य-निष्ठ पौरुष का स्वागत
क्षण हो सर्वोदय के,
मानचित्र में मानवता के
भर दे रंग चितेरा !
मन का मिटे अंधेरा !
जग मग ज्योति जगे दीपाली
मन का मिटे अँधेरा !

स्वस्थ साधना जग जीवन में
मंगल बेला लाये,
कलित-कल्पना के मधुवन में
कर्म-रश्मि मुसकाये,
नवल विकास लिये आंचल में
जागे नया सवेरा !
मन का मिटे अंधेरा !
जग मग ज्योति जगे दीपाली
मन का मिटे अंधेरा !

राका-रोमांचित विभावरी

राका रोमाञ्चित विभावरी
आश्विन का राकेश गगन में !
सहज शान्ति की एक लहर सी
थिरक रही है वन-उपवन में !

श्वेताभा का झीना सा पट
नीले-नीले नभ पर छाया !
चाँदी का बादल हो जैसे
नील सरोवर पर घिर आया !
गिनती के तारे अम्बर में
कहीं-कहीं प्रिय, प्रभा-पुंज से,
कहीं न चिन्ह दूधिया-पथ का
औ' न कहीं दिग्भ्रम की माया !
स्वच्छ, शुभ्र, निर्मल ज्योत्स्ना का
एक मधुर अनुराग नयन में !
राका रोमांचित विभावरी
आश्विन का राकेश गगन में !
सहज शान्ति की एक लहर-सी
थिरक रही है वन-उपवन में !

दिव्य रश्मियों के प्रकाश में
स्नान कर रहीं दशो-दिशाएँ !
मधुपर्णी का सरस परस कर

एक तार-सा बँधा हुआ है
मुक्त श्वास रेशमी गन्ध का,
बोल उठे अमृत-भीने क्षण:
आ, प्रिय प्राण एक हो जाएँ !
तरु पर एक चकोरी जागृत
सहज कामना सी जन-मन में !
राका-रोमांचित विभावरी
आश्विन का राकेश गगन में !
सहज शान्ति की एक लहर-सी
थिरक रही है वन-उपवन में !

शांत प्रकृति है, शान्त विहंगम,
शान्त मार्ग का तरु एकाकी !
शान्त पथी है, शान्त रथी है
शान्त क्रिया है सृजन-कला की !
शान्त क्लान्त जग का कोलाहल,
वन एकान्त शान्त वनवासी !
केवल सजग चेतना हिय में
प्राण-प्रतिष्ठा सी प्रतिमा की !
मृदु भावों में साध मिली है
जैसे कोमल गन्ध पवन में !
राका-रोमांचित विभावरी
आश्विन का राकेश गगन में !
सहज शान्ति की एक लहर-सी
थिरक रही है वन-उपवन में !

ज्योत्स्ना-भीना तन पृथिवी का
कवि का मन अनुराग-रचा-सा !
नयनों में प्रिय छवि की आभा,
चांद गगन में मुसकाता-सा !

एक साथ साकार हो उठे
सहसा जीवन के सब सपने,
नीरवता की अमराई से
अन्तः स्वर उभरा-उभरा-सा !
जाने ये दो क्षण ज्योतिर्मय
फिर कब आवेंगे जीवन में !
राका-रोमांचित विभावरी
आश्विन का राकेश गगन में !
सहज शान्ति की एक लहर-सी
थिरक रही है वन-उपवन में !

चाँद के संसार की बातें करें

चांदनी है, चांद के संसार की बातें करें !
शुभ्र लहरी, शान्त पारावार की बातें करें !

रो चुके हैं हम जगत् व्यवहार का रोना बहुत,
कर सकें तो प्रेम की औ' प्यार की बातें करें !

कल्पना-सी बह रही है रश्मियों की निर्झरी,
भावनाओं के मधुर अभिसार की बातें करें !

अप्सरा-सी है थिरकती स्वप्न की सुकुमारता,
आज भावालोक के विस्तार की बातें करें !

सोमपायी बन रहे हैं इन क्षणों के युग-नयन,
इस समय प्रिय साधना साकार की बातें करें !

'शेष' मधुवन, वल्लरी, यमुना, कदम, मधु बांसरी,
प्राण, आओ अब इन्हीं दो चार की बातें करें !

यौवन गाता गीत प्रणय के

यौवन गाता गीत प्रणय के
सुषमे, सुषमा-भार सँभालो !
कैसी रागारुण वेला है,
तुम भी तनिक सितार सँभालो !

जीवन का व्यापार इसी से,
वाणी का शृंगार इसी से;
संयम खोकर टूट न जाए
यह साँसों का तार, सँभालो !

जीवन की शाश्वत व्याकुलता
है लहरों के लास्य-भँवर में,
अब न मुझे इच्छा है तट की
तूफानो पतवार सँभालो !

मेरी आह न इसे सुहाती,
मेरी चाह न इसको भाती;
मेरे सपने मुझको दे दो,
यह अपना संसार सँभालो !

कौन समीप तुम्हारे लाये,
कौन स्वरों में साध बसाये ?
दूर लिये जाती है मुझको !
वीणा की झंकार सँभालो !

दूभर है जीना जगती में,
दूभर हैं पूजा के क्षण भी;
अपनी श्रद्धा मुझको दे दो
तुम अपने अधिकार सँभालो !

प्रिय सुधि क्या अधरों पर थिरकी
चांद स्वतः बदली से झांका,
देश-काल की सीमा तज कर
जाता है स्वरकार सँभालो !

जागे जागे अमर भावना

व्यास, सदानीरा सरस्वती
सतलुज, यमुना गंगा !
ब्रह्मपुत्र कृष्णा कावेरी
पावन प्राण-तरंगा !
साम गान में !
शुचि-विहान में !
गाती हैं यश प्यारा !
जागे देश हमारा !
जागे जागे अमर भावना
जागे देश हमारा !

उत्तर पर्वतराज हिमालय
जिसका अविचल-प्रहरी !
दक्षिण हिन्द महासागर की
नील छटा क्या छहरी !
जो बादल बन !
बरसे वन-वन !
शाश्वत जीवन-धारा !
जागे देश हमारा !
जागे जागे अमर भावना
जागे देश हमारा !

शस्य-श्यामला जिसकी धरती
स्वर्ण उगाने वाली !
जिसका बालसूर्य है
वसुधा के सुहाग की लाली !
वेद ऋचामृत !
गीता-गुंजित !
जिसका कण-कण तारा !
जागे देश हमारा !
जागे जागे अमर भावना
जागे देश हमारा !

जिसकी उज्ज्वल गौरव गाथा
शेष भारती गायें !
देवभूमि उस भारत की हम
विजय-ध्वजा फहरायें !
जल पर थल पर !
नीलांचल पर !
अमर तिरंगा प्यारा !
जागे देश हमारा !
जागे-जागे अमर भावना
जागे देश हमारा !

हृदय-वीणा परस कर

हृदय-वीणा परस कर
क्रान्ति की झंकार पैदा कर !
नये श्रोता, नये गायक,
नये उद्गार पैदा कर !

युगों से हो रहा है
गान कैसा एक ही स्वर में !
वही गति है, वही लय है,
वही है ताल निर्झर में !
वही आरोह शब्दों का,
वही अवरोह अक्षर में !
अनूठे अर्थ की कोई
नई गुंजार पैदा कर !
नये श्रोता, नये गायक,
नये उद्गार पैदा कर !
हृदय-वीणा परस कर
क्रान्ति की झंकार पैदा कर !

अमर संगीत सुन कर
देव भी नभ से उतर आयें !
सनातन काल की निधियाँ
नई विधि से निखर आयें !
हृदय से काल-सागर के

नये मोती उभर आयें !
निरन्तर साधना से
दिव्य-जीवन-सार पैदा कर !
नये श्रोता, नये गायक,
नये उद्‌गार पैदा कर !
हृदय-वीणा परस कर
क्रान्ति की झंकार पैदा कर !

सरलता से जिसे तू
प्रेम अपना कर सके अर्पण !
रहे जो भाव-सा मन में
कभी अनुभव न हो पाहन !
जिसे सब कह सकें अपना
न हो जिसमें परायापन !
तू अपनी ज्योति से कोई
नया कर्त्तार पैदा कर !
नये श्रोता, नये गायक
नये उद्‌गार पैदा कर !
हृदय-वीणा परस कर
क्रान्ति की झंकार पैदा कर !

जहां प्रत्येक मानव का
सुमन हो प्रेम का मनका !
जहाँ काँटे-तुले फूलों से
हो शृंगार उपवन का !
जहाँ नित लहलहाता ही रहे
उद्यान जीवन का !
तू अपने वास्ते कोई
नया संसार पैदा कर !

नये श्रोता, नये गायक
नये उद्‌गार पैदा कर !
हृदय-वीणा परस कर
क्रान्ति की झंकार पैदा कर !

क्यों ग़म करता है दुनिया का

जाने क्या होगा दुनिया का !

जिसे देखिये स्वार्थ-निरत है
जहां देखिये अर्थ-पिपासा !
शोषण के बीहड़ मरुथल में
मानस-मृग प्यासे का प्यासा !
शिखर दोपहर है जीवन की
किन्तु नयन सम्मुख अँधियारा !
तमसावृत बिफरे सागर का
कहीं न कोई कूल किनारा !
मैं ही भ्रम में भूला हूँ या
यह सारी दुनिया बौरानी !
मानस की क्या प्यास बुझेगी
रहा नहीं आँखों में पानी !
श्रान्त पथी को सुख है तरु का
और न कुछ अपनी छाया का !
जाने क्या होगा दुनिया का !

जाने क्या होगा दुनिया का !

ज्योति नयन में नहीं स्नेह की
राग-द्वेष से हिय जलता है !
कल्पित अहंभाव रख उर में
मानव अपने को छलता है !

पैर बढ़ा कर निर्जन मरु में
आशा करता है मधुवन की !
दृग छल है यह रूप सलोना
या विडम्बना है जीवन की !
अस्थित प्रज्ञ शान्ति क्या पाये
उषः कमल पर तरल तुहिन-सा !
क्षुद्रमना संस्कारहीन-सा
तूफानी लहरों पर तृण-सा !
तमस वर्ण कब रच पाये हैं
ज्योतिस्स्वरमय छन्द विभा का !
जाने क्या होगा दुनिया का !

क्यों ग़म करता है दुनिया का !

अर्थ, अनर्थ, स्वार्थ, परमारथ
यह सब बाह्य दृष्टि का छल है !
बिना स्वार्थ के, किन्तु जगत का
जीवन नीरस है, निर्बल है !
झीना सा आवरण पड़ा है
प्रिय, मानव के उपचेतन पर !
यह आवरण हटे तो निश्चय
स्वार्थ बने परमार्थ मनोहर !
धूप-छाँह सी आँख मिचोली
सुख-दुख सदा खेलते आये !
मानस मृग की प्यास बुझी कब
मेघ भले ही नभ में छाये !
दुनिया यों ही चलती आई
चक्र रुका कब रैन-दिवा का !
क्यों ग़म करता है दुनिया का !

क्यों ग़म करता है दुनिया का !

स्नेह नहीं मिलता है जग से
तो स्वान्तर का स्नेह जला मत !
स्वार्थ भावना की बालू में
यों मोती की आब गँवा मत !
तेरे पर्वत से प्रयास से
जग का दुख तिल भर न घटेगा !
मानस के अम्बर पर से यों
द्वन्द्व-सजल बादल न हटेगा !
शुभ्र भावना के विकास में
तू अपना कर्तव्य किये जा !
अंधकार से आ प्रकाश में
स्वस्थ साधना सोम पिये जा !
तू है एक इकाई शाश्वत
स्रष्टा है कल के स्रष्टा का !
क्यों ग़म करता है दुनिया का !